315hi08

8

750-1200 ई. के मध्य भारतीय परिद श्य

सन 750 से 1200 के मध्य का समय भारतीय इतिहास में आरम्भिक मध्यकालीन युग के नाम से जाना जाता है। पूर्व में इतिहासकारों द्वारा इसे 'अंधेरे–युग' की संज्ञा दी गई थी। यह संभवतः इसलिए कि इस दौरान संपूर्ण राष्ट्र छोटे–छोटे प्रांतों में विभक्त था, जो आपस में युद्ध करने में व्यस्त रहते थे। किन्तु नवीनतम अध्ययन इस बात की ओर इशारा करते हैं कि राजनीतिक रूप से छिन्न–भिन्न भारत भी कला, साहित्य तथा भाषा के क्षेत्र नई सम द्ध सांस्क तिक उपलब्धियों का केन्द्र बना। जबकि मंदिर स्थापत्य कला भारतीय साहित्य के क्षेत्र में तो कुछ सर्वश्रेष्ठ उदाहरण इसी काल की देन हैं। इस प्रकार 'अंधेरे' से हट कर इसे भारतीय इतिहास का सबसे प्रभावशाली काल कहा जा सकता है।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात आप :

- 750 ई. तथा 1200 ई. के मध्य प्रस्फुटित होने वाले विभिन्न राज्यों को पहचान सकेंगे;
- शासन की प्रक ति को परख सकेंगे;
- सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तन को चिह्नित कर सकेंगे;
- सांस्क तिक गतिविधियों को जांच सकेंगे और
- 8वीं 12वीं शताब्दियों के मध्य भारत दक्षिण–पूर्व एशिया के संबंधों की महत्ता स्थापित कर सकेगे।

8.1 राजनीतिक गतिविधियाँ

हर्षवर्धन, जिसके विषय में हम पिछले अध्याय में पढ़ चुके हैं, के पश्चात का राजनीतिक विकास तभी बेहतर ढंग से समझा जा सकता है यदि हम 750–1200 ई. तक की कालावधि को दो चरणों में विभाजित करें– 750 ई. 1000 ई. तथा 1000 ई.–1200 ई। प्रथम चरण में भारत में तीन प्रमुख राजनीतिक शक्तियों का उदय हुआ। ये थे, उत्तर भारत में प्रतिहार, पूर्वी भारत में पाल तथा दक्षिण भारत में राष्ट्रकूट। ये तीनों वंश उत्तर

भारत के गंगा क्षेत्र पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए आपस में लगातार युद्ध करते रहते थे। इन शक्तियों के मध्य सशस्त्र संघर्ष को त्रिपक्षीय युद्ध की संज्ञा दी जाती है। दूसरे चरण में हम इन शक्तियों का विघटन पाते हैं। इसके परिणामस्वरूप भारत में कई छोटी–छोटी सत्ताओं का उदय हुआ। उदाहरण के लिए, उत्तर भारत में प्रतिहार वंश के विघटन के फलस्वरूप विभिन्न राजपूत वंशों, जैसे–चौहान, चंदेल तथा परमार इत्यादि के नियंत्रण में राजपूत वंश आ गए। ये वहीं प्रान्त थे, जिन्होंने 11वीं तथा 12वीं शताब्दी में मुहम्मद गोरी तथा महमूद गजनबी के आक्रमणों से भारत की रक्षा की। किन्तु आक्रमणकारियों के खिलाफ संगठित न हो पाने की वजह से वे अन्ततः हार गए।

हम अब ऊपर वर्णित तीनों शक्तियों के विषय में संक्षेप में चर्चा करेंगे हैं। गुर्जर प्रतिहार वंश की स्थापना 8वीं शताब्दी में नागाभट्ट प्रथम ने मालवा क्षेत्र में की थी। वह एक

मानचित्र 8.1 भारत का राजनीतिक मानचित्र (750-1000 ई.)

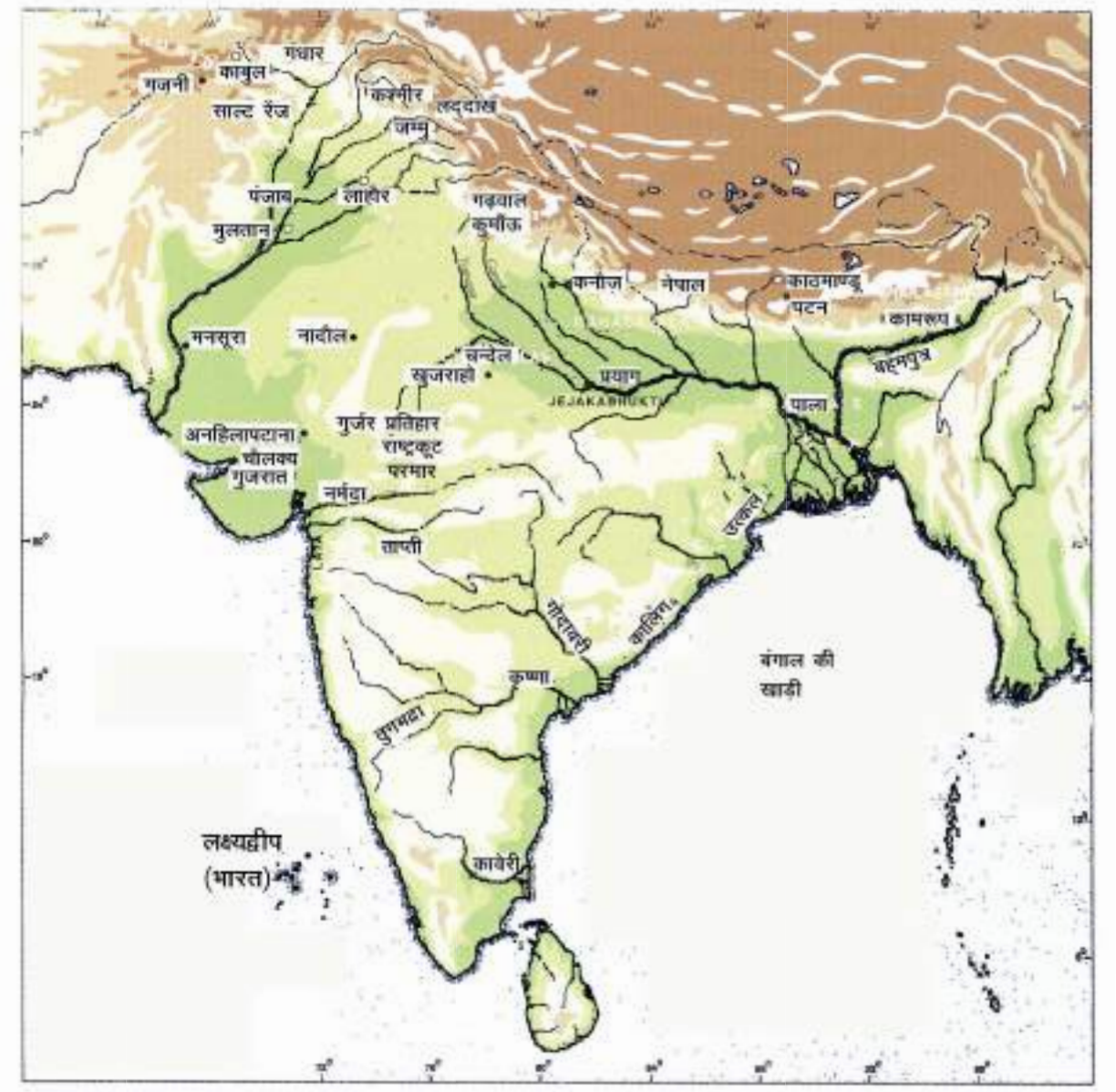

आपकी टिप्पणियाँ

राजपूत था तथा उसके उत्तराधिकारी वत्सराज ने अपने साम्राज्य को उत्तर भारत के एक बड़े हिस्से तक फैलाया तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश में कन्नौज को अपनी राजधानी बनाया। वत्सराज की विस्तार नीति ने उसका बंगाल तथा बिहार के शासक धर्मपाल के साथ संघर्ष कराया। शीघ्र ही दक्षिण भारत से राष्ट्रकूट सम्राट भी इस संघर्ष में कूद पड़ा तथा तभी त्रिकोणीय संघर्ष का प्रारम्भ हुआ अर्थात तीन शक्तियों के बीच युद्ध। यह अगले डेढ़ सौ वर्षों तक आगे के विभिन्न शासकों के मध्य जारी रहा। तथापि कन्नौज पर अपना आधिपत्य बनाए रखने के लिए गुर्जर–प्रतिहारों का संघर्ष चलता रहा। इस वंश का एक और महान शासक नवीं शताब्दी में मिहिर भोज था। अपने साम्राज्य को लुटरों से सुरक्षित बनाए रखने के लिए अरब विद्वान सुलेमान ने उसकी प्रशंसा की है।

पूर्वी भारत में 8वीं शताब्दी में 'गोपाल' द्वारा पाल वंश की स्थापना हुई। चूँकि सभी शासकों के नाम पाल पर ही समाप्त होते थे, अतः इस वंश को 'पालवंश' के नाम से जाना जाता

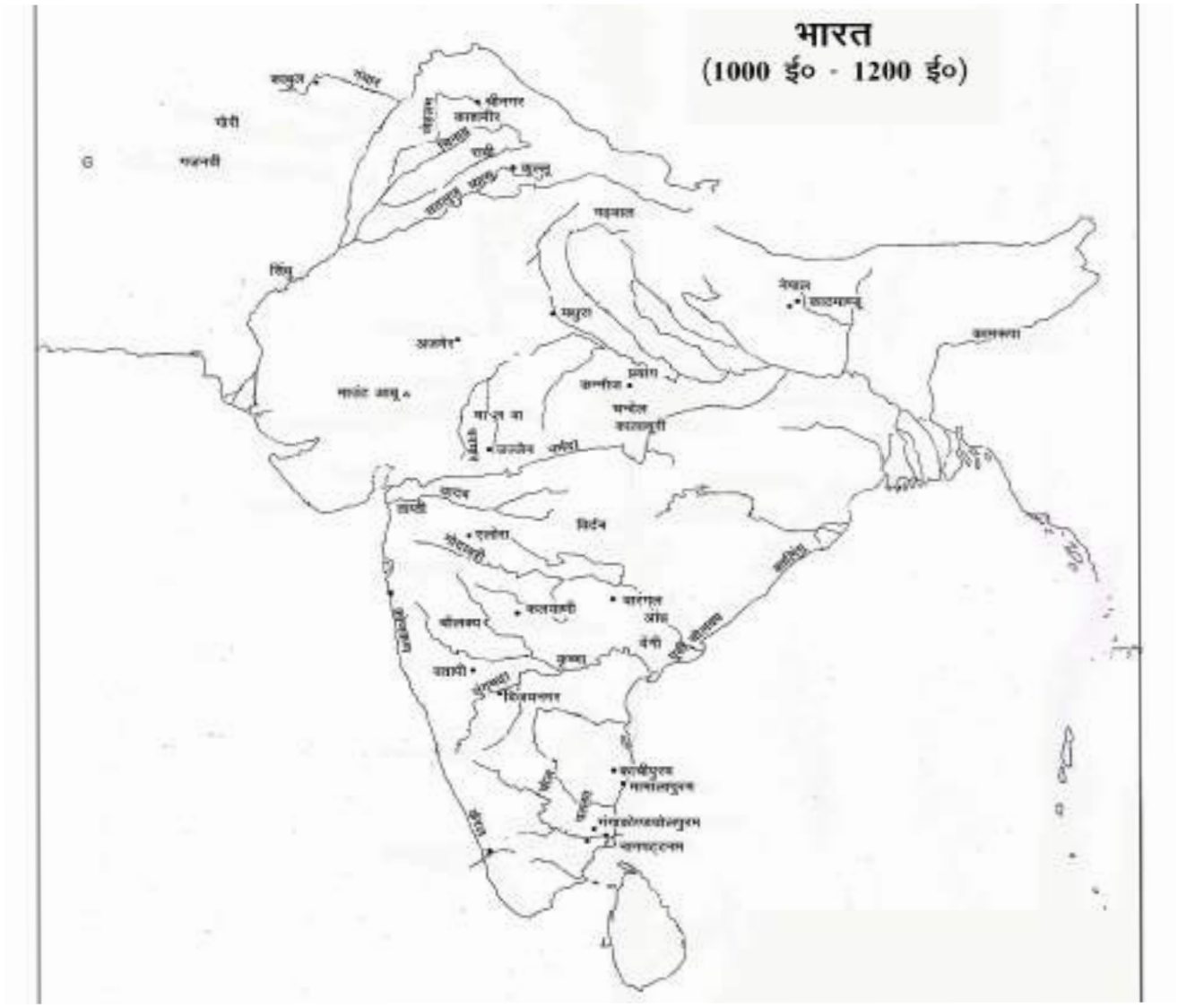

मानचित्र 8.2 भारत का राजनीतिक मानचित्र (1000-1200 ई.)

है। गोपाल के पुत्र तथा पौत्र अर्थात धर्मपाल तथा देवपाल ने पालवंश की प्रतिष्ठा तथा शक्ति में चार चाँद लगाए। हालाँकि पश्चिम की ओर उनका विस्तार प्रतिहारों ने रोक दिया, लेकिन पालों ने बिहार तथा बंगाल में छोटे से अन्तराल के साथ लगभग चार सौ वर्षों तक शासन किया। पाल शासक बौद्ध धर्म को मानते थे। उन्होंने अपने धर्म का विस्तार करने के लिए पूर्वी भारत में विहारों तथा मन्दिरों का बड़ी संख्या में निर्माण कर दिया। भागलपुर (बिहार) के निकट विक्रमशिला विश्वविद्यालय को स्थापित करने का श्रेय भी धर्मपाल को ही जाता है। नालन्दा विश्वविद्यालय की ही भाँति यह पूरे भारत तथा तिब्बत के विद्यार्थियों को आकर्षित करता था। इस विहार में कई संस्क त ग्रंथों का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया गया। विक्रमशिला विश्वविद्यालय से सम्बद्ध सर्वाधिक चर्चित नाम अतिशा दीपंकर का रहा, जो तिब्बत में बड़े आदरणीय थे।

दक्षिण भारत में 8वीं शताब्दी में दंतीदुर्ग ने राष्ट्रकूट वंश की स्थापना की। राष्ट्रकूटों की राजधानी शोलापुर के निकट माल्खेड अथवा मान्यखेत थी। ध्रुव के शासन काल में राष्ट्रकूटों ने वैभवशाली नगरी कन्नौज पर आधिपत्य के लिए उत्तर भारत की ओर रुख किया, किन्तु जैसा कि पहले बताया गया है, इसने त्रिकोणीय संघर्ष को जन्म दिया। राष्ट्रकूट वंश का प्रमुख शासक क ष्ण प्रथम था। इसने एलोरा में विख्यात कैलाश मन्दिर का निर्माण कराया। यह पत्थर के एक ही टुकड़े से बना है तथा भगवान शिव को समर्पित है। अरब लोगों द्वारा लिखे विवरण हमें सूचना देते हैं कि राष्ट्रकूट शासकों के अरब व्यापारियों के साथ बहुत अच्छे संबंध थे। इन व्यापारियों को मस्जिदों का निर्माण करने बिना किसी अवरोध के अपने धर्म का अनुसरण करने की स्वतंत्रता थी। यह राष्ट्रकूट शासकों की धार्मिक उदारता को ही उजागर नहीं करता, बल्कि अरब लोगों के साथ व्यापार बढ़ाकर आर्थिक लाभ प्राप्त करने की उनकी प्रव त्ति को भी दर्शाता है।

दक्षिण भारत में चोल शासकों ने एक शक्तिशाली साम्राज्य की स्थापना 1000–1200 ई. के दौरान की। संगम काल के दौरान वर्णित 'प्रतापी चोल शासक' इस काल के चोल शासकों के मध्य संबंधों में स्पष्टता नहीं है। दक्षिण भारत में पल्लव वंश को सिंहासन से हटाने के बाद चोल शासक सत्ता में आए। चोल साम्राज्य का संस्थापक विजयालय (9वीं शताब्दी) था किन्तु उसके गौरव के वास्तविक वास्तुकार राजराजा प्रथम (985–1014 ई.) तथा उसका पुत्र राजेन्द्र प्रथम (1014–1044 ई.) थे। अपने सर्वोत्तम काल में चोल साम्राज्य उत्तर में तुंगभद्र नदी (क ष्ण नदी की सहायक नदी) से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक विस्त त था। चोल शासकों ने अपनी जल सेना का सफल उपयोग किया तथा न सिर्फ मालदीव तथा लक्षद्वीप द्वीपों को पराजित किया बल्कि श्रीलंका को भी अपने अधीन किया। उन्होंने जाबा, सुमात्रा तथा मलाया के भी शासकों को पराजित किया। राजराजा प्रथम का महानतम योगदान तंजौर स्थित प्रभु श्री शिव को समर्पित उस प्रसिद्ध मन्दिर का निर्माण है जिसे राजराजेश्वर ब हदेश्वर मन्दिर के नाम से जाना जाता है। उसके पुत्र राजेन्द्र प्रथम का शासन और भी अधिक रोमांचक था। उसने पाल शासक मणिपाल को पराजित कर बंगाल में गंगा तक अपनी शक्ति का डंका बजवाया। इस विजय को स्मरणीय बनाने के लिए उसने एक नई राजधानी 'गंगईकोंडचोलपुरम' की नींव डाली तथा स्वयं 'गंगई–कोंड' (गंगा विजेता) की उपाधि धारण की। वह शिक्षा का महान प्रश्रयदाता था तथा पंडित–चोल के उपनाम से प्रख्यात था। अन्तिम प्रमुख चोल शासक कुल्लोतुंग (1070–1122 ई.) था। उसके शासन काल में चोल साम्राज्य में विघटन प्रारम्भ हुआ वह एक बहुत छोटे क्षेत्र में सिमट गया।

उपर्युक्त विवरण से आप समझ गए होंगे कि हालाँकि अंतर्क्षेत्रीय संघर्ष निरन्तर हो रहे थे परन्तु साथ ही संस्क ति भी सम द्धि की ओर बढ़ रही थी। वास्तव में बड़ी राजनीतिक शक्तियों के उदय से विभिन्न क्षेत्रों में अपेक्षाक त शांति की स्थापना हुई। इसने इन क्षेत्रों के कला, वास्तु तथा साहित्य से संबंधित विशेष क्षेत्रीय तरीकों के विकास को जन्म दिया। हम इन तरीकों का इस अध्याय में बाद में अध्ययन करेंगे।

पाठगत प्रश्न 8.1

1. त्रिपक्षीय संघर्ष में भाग लेने वाली तीन प्रमुख शक्तियों के नाम लिखें। साथ ही तीनों वंशों के एक–एक प्रमुख शासक का नाम लिखें।

2. तीनों शक्तियों के मध्य संघर्ष का मुख्य कारण क्या था?

3. वह कौन सा प्रतिहार शासक था जिसकी प्रशंसा अरब विद्वानों ने की है?

4. विक्रमशिला विश्वविद्यालय की नींव किसने रखी थी?

5. पाल शासकों द्वारा कौन से धर्म को प्रश्रय प्रोत्साहन प्राप्त हुआ?

6. किस चोल शासक ने 'गंगईकोंड' की उपाधि धारण की और क्यों?

8.2 शासन की प्रव त्ति

शासन का तत्कालीन ढाँचा प्रायः विकेन्द्रीक त राजनीतिक पद्धति के रूप में दर्शाया गया है। विकेन्द्रीक त राजतंत्र है क्या? यह वह प्रणाली है जिसमें निस्संदेह सर्वोच्च पद पर राजा ही होता है किन्तु वह अपना शासन जागीरदारों अथवा सामंतों जैसे उप–प्रमुखों के सहयोग से करता था। सामन्त व्यवस्था से तात्पर्य ऐसे शासकों से था, जो पराजित हो जाते थे किन्तु उनका राज्य उन्हें इस शर्त पर वापस मिल जाता था कि वह विजयी राजा की अधीनता स्वीकार करेगें तथा उसे नकद तथा अन्य प्रकार से शुल्क की आपूर्ति करते रहेंगे, और आवश्यकता के समय वे सैन्य सहायता भी करेंगे। चूँकि ये सामन्त अपने क्षेत्र में शासन करने के लिए स्वतंत्र होते थे, अतः वे बहुत शक्तिशाली थे। आप अनुमान लगा सकते हैं कि ये सरदार शासन के लिए खतरा भी हो सकते थे तथा इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि दुर्बल शासक के समय ये बगावत का झण्डा उठाकर अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित कर लेते थे। ऊपर दिये गए प्रतिहार साम्राज्य के साथ यही हुआ था।

विकेन्द्रित राजव्यवस्था का अन्य पहलू ब्राहमणों तथा अन्य को भूखंड दान करने की प्रथा में भी देखा जा सकता है। इस परम्परा को सातवाहन वंश के शासकों ने प्रथम तथा द्वितीय शताब्दी में प्रारम्भ किया था, किन्तु गुप्त साम्राज्य के शासन के पश्चात तो यह सम्पूर्ण भारत में प्रचलन में आ गई। अब भूखंडों का दान मात्र धार्मिक व्यक्तियों को ही नहीं बल्कि कुछ राजकीय अधिकारियों को भी किया जाने लगा था। इसके क्या कारण थे? माना जाता है कि व्यापार में लगातार पतन की स्थिति ने इस काल में भूमि दान की परम्परा को जारी करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई होगी क्योंकि सरकारी कर्मचारियों तथा अन्य को उनकी सेवाओं का भुगतान करने के लिए मुद्राओं का अभाव हो चला था। गुप्तोत्तर काल में पुरातत्व खोज में सिक्कों की उपलब्धता न होने से पता चलता हैं कि मुद्राओं का अभाव हो गया था। दान में मिलने वाली भूमि कर मुक्त होती थी अर्थात दान प्राप्त करने वाला व्यक्ति शासन को कोई भी शुल्क अदा करने के लिए बाध्य नहीं था तथा अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए वह उस भूमि का उपयोग करता था। दान प्राप्तकर्ता दान की गई भूमि पर किसी भी शासकीय हस्तक्षेप से मुक्त था। इस प्रकार दान प्राप्त करने वाला दान में मिली भूमि को अपने अधिकार में ले लेता था।

दक्षिण भारत में चोल शासकों की प्रशासनिक व्यवस्था थोड़ी भिन्न थी। ग्राम स्तर पर, स्थानीय लोग स्वशासन का आनन्द उठाते थे। स्वयं द्वारा निर्वाचित जन–प्रतिनिधियों की सहायता से वे अपने प्रशासन की देख–रेख किया करते थे। अभिलेखों में दो प्रकार की ग्राम सभाओं का उल्लेख प्राप्त होता है। वे थे, सभा तथा उर। ब्राह्मणों द्वारा वंशानुगत रूप से शासित ग्रामों की समितियों को सभा कहा जाता था, जबकि गैर–ब्राह्मण प्रभुत्व वाली समितियां उर कहलाती थीं। ये समितियां ग्रामीणों द्वारा एक निश्चित प्रणाली के तहत निर्वाचित सदस्यों की सहायता से जन–कल्याणकारी कार्य, कर संचरण तथा मंदिर प्रबंधन जैसे कार्यों के उत्तरदायित्व का निर्वाह करती थीं। यह चोल प्रशासन की एक अनुपम विशिष्टता थी, क्योंकि इससे केंद्रीय सत्ता तथा स्थानीय स्व–शासन के बीच बेहतर संबंध का पता चलता है।

पाठगत प्रश्न 8.2

1. विकेंद्रित राजतंत्र प्रणाली से क्या तात्पर्य है? यह आरम्भिक मध्यकालीन इतिहास के दौरान उत्तर भारत के राजतंत्र के लिए किस प्रकार हानिकारक थी?

2. किस वंश ने ग्राम समितियों को महत्ता प्रदान की? ग्राम समितियां किस नाम से जानी जाती थीं?

8.3 सामाजिक आर्थिक परिवर्तन

आरम्भिक मध्य काल में कई सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तन भी देखे गए। सामाजिक द ष्टि से इस काल का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम जातियों की संख्या में व द्धि होना था।

आपकी टिप्पणियाँ

यह कैसे घटित हुआ? इसका एक प्रमुख कारण ब्राह्मणों में नए समूहों का समावेश रहा। समझा जाता है कि ज्यों–ज्यों भूदान में व द्धि हुई, क षि के दायरे में नए क्षेत्र भी आने लगे। इसने स्थानीय नागरिकों को शिकार करना त्यागने तथा क षि को अपनाने को प्रेरित किया। वे क षक के रूप में सामने आए तथा समाज में शूद्र के रूप में स्थापित हो गए। वास्तव में भूदान की परम्परा ने विभिन्न आंतरिक प्रान्तों में ब्राह्मणों के स्थान परिवर्तन तथा प्रवास को जन्म दिया, जहां वे अपनी ब्राह्मणवादी संस्क ति को पल्लवित और पोषित कर सकें। भूदान ने कायस्थों की संख्या में भी व द्धि की। कायस्थ मूलतः लिपिक थे तथा भूदान के लेख–पत्रों के लेखन में दक्ष थे। स्वाभाविक रूप से ज्यों–ज्यों भूदान में व द्धि हुई, कायस्थों के महत्त्व में भी अभूतपूर्व व द्धि हुई।

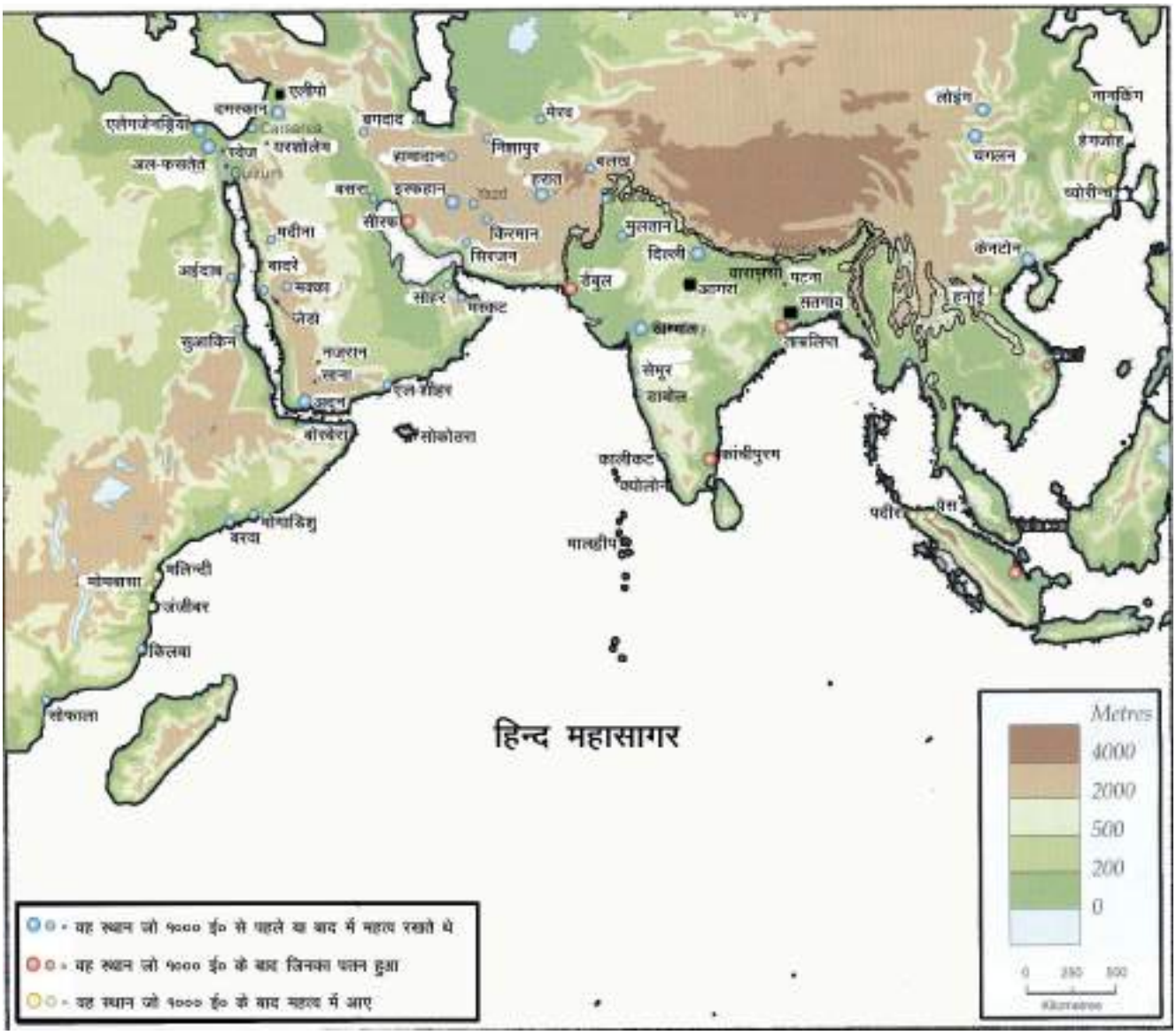

मानचित्र 8.3 दक्षिण–पूर्व एशिया

किन्तु इस युग की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता नए राजपूत वर्ग का उदय रहा, जैसे चौहान, परमार तथा चंदेल इत्यादि। बहुत से इतिहासकारों के अनुसार वे विभिन विदेशी शासकों, जैसे शक, हूण तथा कुषाण इत्यादि के वंशज थे, जो इतिहास में भिन्न युगों में उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र से भारत में आए थे। धीरे–धीरे ये व्यक्ति राजस्थान के निवासी हो गए भारतीय समाज में शामिल होने के पश्चात, योद्धा वर्ग के रूप में उभरे। कई इतिहासकार इन्हें ब्राह्मणवादी समाज के क्षत्रिय वर्ग के रूप में भी देखते हैं, किन्तु वर्तमान में कई विद्वान राजस्थान में राजपूतों के उदय क षि गतिविधियों की प्रगति में कुछ संबंध मानते हैं। यह स्पष्ट है कि भूखंड दान करने में व द्धि होने पर क षि बस्तियों में व द्धि हुई थी। परिणामस्वरूप कई स्थानीय प्रमुखों के पास अपनी स्वतंत्र इकाई की स्थापना करने के लिए पर्याप्त आर्थिक राजनीतिक शक्ति थी। अपनी नवीनतम स्थिति की प्रमाणिकता को बनाए रखने के लिए उन्होंने गंगा क्षेत्र के ब्राह्मणों को कर्मकांड तथा शाही उत्सव प्रस्तुत करने के लिए आमंत्रित किया तथा बदले में उन्हें भूमि दक्षिणा के रुप में दी। उन्होंने ब्राह्मणों को अपने विषय में राम (सूर्यवंशी) क ष्ण (चन्द्रवंशी) के वंशज होने के बारे में भी लिखने को प्रोत्साहित किया, जिससे वे योद्धा वर्ग में एक सम्मानजनक स्थिति को कायम रख सकें।

आर्थिक रूप से प्रथम–चरण (750–1000 ई.) पतन का काल माना जाता है। यह सिक्कों के आदान–प्रदान उत्तर भारत में नगरों की वर्तमान स्थिति से ज्ञात होता है। किन्तु सन 1000 ई. में द्वितीय चरण में इस व्यापारिक परिस्थितियों में सुधार की अवस्था को देखते हैं। न सिर्फ हमें नई मुद्राओं के प्राप्त होने बल्कि व्यापारिक वस्तुओं नगरों का भी विवरण मिलता है। इसके क्या कारण हो सकते हैं? इसके दो मुख्य कारण प्रतीत होते हैं–पहला भूखंड दान देने की प्रक्रिया के फलस्वरूप क षि में व द्धि हुई, जिससे हम वस्तु विनिमय के लिए अतिरिक्त उत्पादन की स्थिति पाते हैं तथा दूसरा अंतर्राष्ट्रीय जल व्यापार में भारतीय तटीय क्षेत्रों में अरब व्यापारियों का उदय हुआ। अरबों ने 712 ई. में सिंध में अपना राज्य स्थापित किया तथा धीरे–धीरे उन्होंने अरब से चीन तक अपना औपनिवेशिक विस्तार किया। इन उपनिवेशों ने भारतीय उत्पादों के विक्रय तथा उत्पादन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई तथा भारत के बाहरी व्यापार की प्रगति में सहायता की। चोल शासकों के शासन काल में दक्षिण–पूर्व एशिया (मलय, इंडोनेशिया) तथा चीन के साथ घनिष्ठ व्यापारिक संबंध देखने को मिलते हैं।

पाठगत प्रश्न 8.3

1. राजपूत वर्ग के उदय के मुख्य कारण क्या थे?

8.4 सांस्क तिक विकास

नई क्षेत्रीय शक्तियों के आने से नए राजनीतिक सांस्क तिक क्षेत्रों का उदय हुआ जैसे–उत्तरी गुजरात में बंगाल उड़ीसा, मध्य भारत में महाराष्ट्र तथा दक्षिण भारत में आंध्र, कर्नाटक तमिलनाडु। हमारे वर्तमान कला, साहित्य, भाषाओं के रूप की नींव उसी

आपकी टिप्पणियाँ

युग में पड़ी। बंगाली, असमिया, उड़िया तथा मराठी इत्यादि भारत के उत्तर–दक्षिण पूर्वी भाग में बोली जाने वाली भाषाएँ इसका उदाहरण हैं। इन भाषाओं में रचे गए साहित्य ने संस्क त के एकाधिकार को समाप्त किया। नए क्षेत्रीय शासकों के संरक्षण के कारण ही स्थानीय भाषाओं में विविध–साहित्य का स जन हो सका। इस काल की सर्वाधिक प्रमुख क्षेत्रीय भाषाओं की रचना, चोल शासकों के शासन काल में कदम्ब द्वारा रचित तमिल में 'रामायण' रही। इसी प्रकार कर्नाटक क्षेत्र में पंपा, जिसे कन्नड साहित्य के महत्त्वपूर्ण रत्नों में से एक माना जाता है, ने, 'पंपा–भारत' के नाम से प्रचलित विक्रमार्जुन–विजय की रचना की। इसी प्रकार आंध्र क्षेत्र में ननिया ने महाभारत के कुछ अंशों का अनुवाद तेलुगू में किया, जिसे कवि तिकन्ना ने 13वीं शताब्दी में पूर्ण किया।

तथापि संस्कत की महत्ता विद्वानों में ज्ञान की भाषा के रूप में बनी रही। संस्कत में लिखी गई इस काल की प्रमुख रचनाएं थी कथा–संग्रह 'कथासरितसागर', कश्मीर के विभिन्न शासकों का विवरण प्रस्तुत करने वाली कल्हण द्वारा रचित 'राजतरंगिणी', तथा पाल शासकों के काल में बंगाल के कवि 'जयदेव' द्वारा रचित 'गीतगोविन्दम'।

राजसंरक्षण प्राप्त करने वाली अन्य गतिविधि थी, मन्दिर–निर्माण। इन मंदिरों का निर्माण करवाने वाले शासकों ने गौरव तथा शक्ति को दर्शाया। जितना भव्य मंदिर, उतना ही शक्तिशाली उसका निर्माण करवाने वाला माना जाता था। यकीनन इनमें परस्पर संबंध था। मंदिर–निर्माण तथा उनके नियमित रख–रखाव में बड़ी मात्रा में मानव तथा वितीय संसाधनों की आवश्यकता पड़ती होगी यह तभी संभव था जब वह राजा धनी तथा शक्तिशाली हो।

इस काल के दौरान निर्मित हुए मंदिरों की स्थापत्य कला में हम तीन श्रेणियों का उदय पाते हैं, जिन्हें नागर, द्रविड़ तथा वेसर (मिश्रित) के नाम से जाना गया। नागर शैली की प्रमुख विशेषता विशाल मीनारों का निर्माण था। इस शैली में निर्मित मंदिर उत्तर भारत के विस्त त भूभाग में फैले हैं, विशेषकर मध्यभारत, गुजरात तथा उड़ीसा में। तथापि प्रचलित नागर शैली में भी क्षेत्रीय स्तर पर क्षेत्रीय विशेषताएं थीं। इस शैली के प्रमुख मंदिरों में भुवनेश्वर में लिंगराज मंदिर, कोणार्क का सूर्य मंदिर, दक्षिण भारत में मंदिर–निर्माण की द्रविड़ शैली विकसित हुई। चोल शासन काल में यह अपने गौरव के उच्चतम स्तर तक पहुंची। इस शैली की प्रमुख विशेषताएं थीं गर्भग ह, विमान, मंडप गोपुरम का निर्माण। गर्भग ह से तात्पर्य था मुख्यदेव का अन्तर्निवास स्थल। गर्भग ह के ऊपर बनी इमारतों को विमान कहा गया, मंडप अंकित स्तंभों का विशाल भवन, जो गर्भग ह के सम्मुख निर्मित होता था। मन्दिर क्षेत्र के चारों ओर बने भव्य बड़े दरवाजों को गोपुरम कहा गया।

इस शैली का सर्वाधिक प्रमुख मंदिर चोल शासक राजराजा द्वारा तंजौर स्थित ब हदेश्वर मंदिर है। वेसर मन्दिर मिश्र पद्धति का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये चालुक्य शासकों के संरक्षण में निर्मित हुए तथा बदामी (कर्नाटक) के निकट पट्टकल में पाए गए। मूर्ति निर्माण के क्षेत्र में भी इस युग ने नई ऊंचाइयों को छुआ। चोल कलाकारों द्वारा तांबे की बनी नटराज की मूर्ति इस युग की अनमोल देन है। इन मूर्तियों में शिव को न त्य करने की भंगिमा में दर्शाया है, जो कि अपनी धुन तथा संतुलन में अतुलनीय है।

चित्र 8.1 नटराज

पाठगत प्रश्न 8.4

1. उत्तर भारत में विकसित होने वाली स्थापत्य कला की शैली का नाम लिखें?

2. मूर्ति निर्माण के क्षेत्र में चोल कलाकारों का योगदान लिखें?

8.5 दक्षिण पूर्व एशिया के साथ संबंध

भारतीय प्राचीन काल से ही व्यापार तथा अन्य गतिविधियों की वजह से विश्व के तमाम हिस्सों में भ्रमणशील रहे हैं। जहां तक भारत के दक्षिणपूर्व एशिया के साथ संबंधों का प्रश्न है, वह ई.पू. पांचवीं शताब्दी के लगभग प्रतीत होता है। जातक तथा अन्य बौद्ध साहित्य में भारतीयों द्वारा स्वर्णद्वीप की यात्रा का उल्लेख मिलता है, जिसे जावा के रूप में जाना जाता है। दक्षिण–पूर्व एशिया के साथ इन संबंधों की पहचान हमें नवीनतम पुरातत्व खोजों में थाइलैंड, वियतनाम तथा इंडोनेशिया के तटीय क्षेत्रों से प्राप्त भारतीय मोती, गोमेद तथा

अन्य बहुमूल्य रत्नों से प्राप्त होती है। ये खोजें ई.पू. प्रथम शताब्दी तक चलती चीनी कथाओं के अनुसार दक्षिण–पूर्व एशिया में प्रथम साम्राज्य की स्थापना फूनान (कम्बोडिया) में प्रथम शताब्दी में कौन्दिन्य नामक ब्राह्मण ने की, जो भारत से आया तथा उसने स्थानीय राजकुमारी से विवाह किया। हालांकि दक्षिण–पूर्व एशिया के साथ भारतीय व्यापारिक संबंध 5वीं शताब्दी के लगभग और प्रगाढ़ हुए, जब संस्क त भाषा में लिखे उल्लेख विभिन्न क्षेत्रों में प्रारंभ हुए। यह अपने सर्वोच्च शिखर पर 800 ई०–1300 ई० तक रहा, जब पूरे दक्षिण–पूर्व एशिया में भारतीय नाम के कई शासक तथा वंशों का उदय हुआ।

दक्षिण और पूर्व के संबंध मुख्यतः व्यापार पर आधारित थे। दक्षिण–पूर्व एशिया इलायची, चन्दन की लकड़ी तथा लौंग में सम द्ध था जिसने भारत तथा पश्चिम के बीच व्यापारिक संबंधों में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। प्रारंभ में भारतीय व्यापारी वर्ग ने तटीय क्षेत्र में निवास करना प्रारंभ किया, किन्तु धीरे–धीरे उन्होंने अपना सूचनातंत्र आंतरिक क्षेत्रों में स्थानांतरित कर दिया। भारतीयों की धार्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मुख्यतः बौद्ध ब्राह्मण पुजारी भी व्यापारियों के साथ आए। इस प्रकार दक्षिण–पूर्व एशिया में भारतीय संस्क ति सभ्यता का विस्तार हुआ, किन्तु यहां यह स्मरणीय होगा कि भारतीय संपर्कों ने स्थानीय संस्क ति को अलग नहीं किया। यह स्थानीय विशेषताओं तथा भारतीय संस्क ति का एक मिला–जुला रूप था। उदाहरण के लिए संस्क त न्यायालय की भाषा के रूप में अपनाई गई, वहीं विभिन्न क्षेत्रीय भाषाएं भी साथ में प्रयुक्त होती रहीं। क्योंकि हमें संस्क त तथा स्थानीय भाषाओं में वर्णित उल्लेख प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार दक्षिण–पूर्वी एशियावासियों तथा ब्राह्मणों में वर्ण–व्यवस्था तो थी, किन्तु समाज का वर्गीकरण भारत की तरह कठोर नहीं था।

दक्षिण–पूर्व एशिया में सर्वाधिक प्रमुख वंश 8वीं शताब्दी में स्थापित हुआ शैलेन्द्र वंश था। इसमें जावा, सुमात्रा तथा दक्षिण–पूर्व एशिया के अन्य हिस्से थे। वे एक विकसित नौ–शक्ति थे तथा अपनी भौगोलिक परिस्थितियों के चलते चीन, भारत तथा पश्चिम के अन्य देशों के व्यापार को नियंत्रित करते थे। शैलेन्द्र शासक बौद्ध धर्म के अनुयायी थे तथा भारतीय शासकों के साथ उनके घनिष्ठ संबंध थे। इसी वंश के एक शासक ने नवीं शताब्दी में नालन्दा में एक बौद्ध मठ का निर्माण करवाया तथा उसके अनुरोध पर बंगाल के पाल शासक देवपाल ने उसके रख–रखाव के लिए पांच गांव दान में दिए। इसी प्रकार अन्य चोल शासक राजपाल प्रथम द्वारा तमिल तट पर एक बौद्ध मठ के निर्माण की अनुमति प्रदान की गई। शैलेन्द्र शासकों ने एक भव्य बौद्ध मंदिर का निर्माण जावा में बारोबुदुर में किया। यह एक पहाड़ी पर स्थित है तथा उसमें नौ चबूतरे हैं।

बौद्ध धर्म के अतिरिक्त हिन्दू देवी–देवता जैसे शिव, विष्णु की आराधना भी दक्षिण–पूर्व एशिया में प्रचलित थी। उन्हें समर्पित कई मंदिर विभिन्न स्थानों पर पाए जाते हैं। यह भारतीय प्रेरणा तथा प्रभाव की झलक देता है। भगवान विष्णु को समर्पित सर्वाधिक प्रसिद्ध मंदिर अंगकोरवाट में स्थित है, जो 12वीं शताब्दी में कम्बोडिया के शासक सूर्यवर्मन द्वितीय द्वारा बनवाया गया था। यह पानी से भरी हुई खाई से घिरा हुआ है। इसमें विशाल गोपुरम है तथा इसमें विशाल दीर्घाएं हैं, जिनकी भित्तियों पर रामायण महाभारत से संबंधित मूर्तियां अलंक त हैं।

पाठगत प्रश्न 8.5

1. दक्षिण–पूर्व एशिया के शासकों के किन भारतीय शासकों के साथ 9वीं तथा 11वीं शताब्दी के मध्य घनिष्ठ संबंध थे?

2. दक्षिण–पूर्व एशिया के दो प्रमुख मंदिरों के नाम लिखें। वे किन्हें समर्पित थे?

आपने क्या सीखा

सन 750 से 1200 तक की कालावधि अब 'अंधेरे युग' के नाम से नहीं जानी जाती है। इसमें कई महत्त्वपर्ण राजनीतिक, सामाजिक तथा सांस्क तिक घटनाएं हुईं। राजनीतिक रूप से 750–1200 ई. के मध्य विभिन्न क्षेत्रीय सत्ताओं का उदय हुआ। उत्तर भारत में गुर्जर–प्रतिहार, पूर्व में पाल तथा दक्षिण में राष्ट्रकूटों का उदय प्रारम्भिक काल (750–1000 ई.) के मध्य हुआ तथा आगे चलकर (1000–1200) उत्तर में राजपूत दक्षिण में चोल शासकों ने पूर्ववर्ती शासकों से सत्ता हासिल की।

शासन की प्रव त्ति विकेंद्रीयक त थी, जहां सर्वोच्च पद पर राजा होता था तथा सामन्त उप–प्रमुख हुआ करते थे। धार्मिक व्यक्तियों तथा राज अधिकारियों को उनके वेतन में भूखंड दान करने का प्रचलन बढ़ा था। सभा (ब्राह्मणों के प्रभुत्व वाले गांव) तथा उर (गैर–ब्राह्मण प्रभुत्व वाले गांव) दक्षिण भारत में दो प्रमुख प्रशासनिक शक्तियां थीं।

समुद्रपार के घटते व्यापार ने इस युग में आर्थिक प्रगति को क्षीण किया। इस युग के दौरान ही विभिन्न जनजातीय लोगों ने शिकार त्यागकर क षि करना आरंभ किया तथा ब्राह्मणवादी समाज में प्रवेश किया।

इस युग को अभूतपूर्व साहित्यक विकास के लिए जाना जाता है। क्षेत्रीय साहित्य तथा क्षेत्रीय भाषाओं का विकास इस काल में हुआ। मंदिर स्थापत्य कला में नागर, द्रविड़ तथा वेसर शैलियों का विकास हुआ। भारतीय व्यापारियों द्वारा दक्षिण–पूर्व एशिया (जावा, सुमात्रा, मलय, कम्बोडिया, थाइलैंड, वियतनाम, इंडोनेशिया) में व्यापार स्थापित करने के कारण सांस्क तिक संबंध स्थापित हुए।

पाठांत प्रश्न

1. 10वीं तथा 12वीं शताब्दी के मध्य दक्षिण भारत के इतिहास में ऐसे वंश का नाम लिखें जो शिखर पर पहुंचा। इस वंश के शासकों की मुख्य उपलब्धियों का वर्णन करें।
2. त्रिपक्षीय संघर्ष में सम्मिलित तीनों वंशों के नाम लिखें।

3. जनता की नजरों में अपनी शाही वैधता स्थापित करने की आवश्यकता राजपूतों को क्यों हुई?
4. आरंभिक मध्यकाल में सांमतों का शासन के राजनीतिक ढांचे में अभिन्न अंग बनने की प्रक्रिया समझाएं?
5. आरंभिक मध्यकाल में हुए सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तनों का विश्लेषण कीजिए।
6. आरंभिक मध्यकाल में हुए मुख्य सांस्क तिक विकास समझाएं?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

8.1

1. गुर्जर प्रतिहार–नागभट

   पाल–गोपाल

   राष्ट्रकूट–क ष्ण प्रथम
2. कन्नौज पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए
3. मिहिरभोज
4. धर्मपाल
5. बौद्ध धर्म
6. राजेन्द्र प्रथम क्योंकि उसने गंगा को जीता था

8.2

1. सर्वोच्च पद पर राजा होता था तथा अपनी प्रशासनिक उत्तरदायित्वों को उप–प्रमुख (सामन्तों) के साथ साझा करता था। जब भी कोई दुर्बल शासक सिंहासन पर बैठता था, वे शासन के विरुद्ध झंडा उठा देते थे।
2. चोल : सभा उर

8.3

1. राजस्थान में क षि गतिविधियों का विस्तार

8.4

1. नागर
2. नटराज की ताम्र प्रतिमा

8.5

1. जावा, सुमित्रा तथा मलय
2. अंगरकोवाट (कम्बोडिया) बराबुदुर–जावा

पाठान्त प्रश्नों के लिए संकेत

1. देखें अनुच्छेद 8.2
2. देखें अनुच्छेद 8.1
3. देखें अनुच्छेद 8.3
4. देखें अनुच्छेद 8.2
5. देखें अनुच्छेद 8.3 और
6. देखें अनुच्छेद 8.4